प्रस्तर प्रतिमाओ एवं कलावस्तुओं का परिरक्षण
Topic- Conservation & preservation

Badar **Ara**
Professor
Dept. of A.I.H. & Archaeology,
Patna University, Patna-800005

P.G./ M.A. IVth **Semester ,**

Dept. of A.I.H.& Archaeology. Patna University

Paper- Museology (E.C.)

सभ्यता के प्रारंभिक चरण से लेकर वर्तमान काल तक मनुष्य ने अपनी जीवनोपयोगी वस्तुओं के निर्माण तथा भावनात्मक प्रदर्शन में पत्थर से सहयोग प्राप्त किया है। जिस प्रकार भारतीय लेखकों ने अपनी लेखनी के माध्यम से अपनी भावनाओं एवं अनुभवों को व्यक्त किया है उसी प्रकार भारतीय वास्तुकारों एवं स्थापत्यकारों ने अपनी छेनी, कन्ती एवं तूलिका के माध्यम से अपनी भावनाओं एवं अनुभवों को व्यक्त किया है जो किसी भी ग्रन्थ से कम महत्त्वपूर्ण नही है।

क्षरण के उत्तरदायी कारक - पत्थर अकार्बनिक होते हैं। ये स्फटिक; बलुआ और संगमरमर तीन प्रकार के होते हैं। पाषाणिक वस्तुओं में क्षरण हेतु अधोलिखितकारक उत्तरदायी होते हैं-

1. **रासायनिक क्षरण** : पाषाणिक कलाकृतियाँ पर होनेवाले रासायनिक क्षरण इस प्रकार हैं-

हाइड्रेशन एवं डिहाइड्रेशन- पाषाणिक कलावस्तुओं पर मौसम परिवर्तन के फलस्वरूप वर्षा काल में नमी तथा ग्रीष्म काल में गर्मी का अवशोषण प्रभावी होता है। इस कारण उनमें परते बनने लगती हैं तथा कालान्तर में वे दरक कर बाहर निकलने लगती हैं।

लवण तत्त्व का जमाव- पाषाणिक कलावस्तुओं पर हाइड्रेशन एवं डिहाइड्रेशन की क्रिया के फलस्वरूप क्षारीय लवणों का एकत्रीकरण हो जाता है। ये लवण तत्त्व उसके अस्तित्व हेतु खतरनाक होते हैं।

हाइड्रोलिसिस की क्रिया- जिस खदान के ये प्रस्तर खंड होते हैं उनमें खान-अवयवों के पानी में विघटित होने के कारण, खनिज अणुओं आदि के प्रभावित होने के कारण परतें अपने सिलिकॉन एवं एडेसिव गुणों को छोड़ते हुए चटखनें लगती हैं।

2. जैविक क्षरण- प्रस्तर प्रतिमाओं पर मांस और लेन प्रकार की काइया जब फफूद के रूप में अस्तित्ववान हो जाती हैं तो प्रतिमाओं की सतहो में विघटन प्रारंभ हो जाता है। कभी प्रस्तर प्रतिमाओं के सतह विघटन में पशु-पक्षी भी सहायक बन जाते हैं। जहां विड़ियाँ के बीट आदि के कारण अनेक पौधों का अंकुरण प्रस्तर प्रतिमाओं की सतह पर होने लगता है वहीं कुछ ऐसे भी पशु प्रकार है जिनके चाटने या रगड़ने से प्रतिमाओं का अस्तित्व क्षरणशील हो जाता है।

3.भौतिक क्षरण- संग्रहालय में संग्रहीत प्रस्तर कलाकृतियाँ प्रदर्शन आदि उद्देश्यों से स्थानान्तरित होती रहती है। इनकी पैकिंग तथा हैंडलिंग में लापरवाही आदि से उनको क्षति पहुंचती है। प्रदर्शन कक्ष में असावधानीपूर्वक रखने से ऐसी कलावस्तुओं पर, धूल, गन्दगी, ग्रीस, तेल आदि के धब्बे जम कर प्रभावी हो जाते है। संग्रहालय के बाहर प्रड़ी प्रस्तर प्रतिमाओं, कलावस्तुओं पर धार्मिक भावों से ओत-प्रोत हो लोग घी, गुड़, सिन्दूर पोत देते है। इस प्रकार के कल्केरियस जमाव सतह में जमकर पत्थर की सतह को प्रभावित करने लगती है।

परिरक्षण- प्रस्तर कलाकृतियों पर प्रभावी काई के पृथक्करण हेतु कागज की लुग्दी का 2-3 सेमी० मोटा लेप लगाकर सोखने हेत् छोड़ दिया जाता है। जब लुग्दी का लेप पूर्णतया सूख जाता है, उसे स्वच्छ जल से साफ कर पुन लुग्दी का लेप लगा दिया जाता है। यह प्रक्रिया तब तक दुहराई जाती रहती है जब तक प्रस्तर कलाकृतियाँ से लवण तत्त्व समाप्त नही हो जाता है। यह कलावस्तु की सामान्य परिरक्षण विधि है।

सिल्वर नाइट्रेट परीक्षण- सामान्य विधि द्वारा प्रस्तर कलाकृतियों का परिसक्षण करने के बाद उनपर विद्यमान लवण की मात्रा का पता लगाने के लिए सिल्वर नाइट्रेट परीक्षण करते है। इसके लिए दो परखनली की आवश्यकता होती है। एक परखनली में स्वच्छ पानी तथा दूसरी में धुलाई मे प्रयुक्त जल रखते है। तदनन्तर दोनों परखनलियों में सिल्वर नाइट्रेट घोल की दस बूंदे डालकर हिलाते है। कुछ समय बाद स्वच्छ जलयुक्त परखनलों में कम दूधियापन और धुलाई में प्रयुक्त जल वाली परखनली में अधिक दूधियापन दिखलाई पड़ता है। इस प्रकार पाषाणिक कलावस्तुओं पर लुग्दी का प्रयोग तब तक दुहराते रहना चाहिए जब तक स्वच्छ जल वाले परखनली के दूधियापन के समान धुलाई वाली परखनली के जलकण

दूधियापन न हो जाय। जब दोनो परखनलियों में जलां का दूधियापन समान हो जाय तो यह समझना चाहिए कि कला वस्तु से लवण तत्त्व समाप्त हो गया है।

संगमरमर, सेलखड़ी एवं चूना पत्थर- प्राचीन काल में निर्माण कार्या हेतु प्रयुक्त पत्थरों में शिष्ट (Sehist) पत्थर का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। ईस्वी सन् के प्रारंभ से लेकर चौदहवीं शताब्दी ई० तक मूर्ति निर्माण हेतु इसका सर्वाधिक उपयोगू होता रहा। कुषाण एवं पश्चिमी सभ्यता के घनिष्ठ सम्पर्क के परिणामस्वरूप आविर्भूत गान्धार कला के अवशेष मुख्यतया प्रस्तर, प्लास्टर एवं गच अथवा मिट्टी से बनाई गई मूर्तियों के रूप में प्राप्त हुएहैं। गुप्त एवं परवर्ती गुप्त काल में पश्चिमी भारत के शिल्पियों ने इस प्रस्तर को विशेष प्रमुखता दी।

दीर्घकाल तक भूमि में दबे रहने के कारण ऐसी प्रस्तर प्रतिमाओं पर सफेद अवसाद की मोटी परते जमा हो जाती है जिंससे ये सफेद बलुकाश्म की प्रतीत होती है। सफेद अवसाद के ऊपर मिट्टी एवं कीचड़ भी जमा हो जाता है। प्रस्तर प्रतिमाओं के परिरक्षण की प्राथमिक प्रक्रिया पत्थरों की पहचान होती है। इस पहनान से पत्थरों की प्रकृति, परिवर्तन आदि का अध्ययन सरलतापूर्वक किया जा सकता है। उपचार हेतु सर्वप्रथम प्रस्तर प्रतिमाओं की वाह्य सतह पर उपस्थित असंहत जमावों को दूर करने के लिए 15% अमोनिया द्रव से भरे टब में इन्हें डालकर बुश द्वारा साफ किया जाता है। जमाव की कठोर परत एवं मिट्टी की वाहा परत को कठोर ब्रुश द्वारा सावधानीपूर्वक रगड़कर साफ किया जाता है। इस प्रक्रिया में 15-20 घंटे भी लग सकते है। अम्लीय प्रभावों से सुरक्षित होने के कारण चूने के कठोर जमाव को अम्ल विलयनो से दूर किया जाता है सल्फ्युरिक एवं हाइड्रोक्लोरिक अम्लों का उपयाग उनके अधिक क्रियाशील होने के कारण नहीं किया जाता है। इनके स्थान पर साइट्रिक एसिड एवं एसीटिक एसिड उपयोगी होते हैं। इन अम्लों के घोल में प्रस्तर कलाकृतियों को 20-25 घंटे तक डुबो कर रखा जाता है। इससे चुना अपघटित होकर पात्र के तल में एकत्रित हो जाता है। इसके बाद अवशिष्ट अवसाद को पृथक् करने हेतु बुश का प्रयोग किया जाता है। उपचार के बाद प्रतिमाओं पर उपस्थित साइट्रिक एसिड तत्त्व को हटाने के लिए उन्हें बहते हुए जल में अच्छी प्रकार साफ किया जाता है। अवशिष्ट अवसाद हेतु प्रतिमाओं को पुनः 20% एसीटिक एसिड से भरे पात्र में 20 घंटे तक फिर डुबोकर रखा जाता है। बाद में बुश द्वारा रंगड़कर साफ वकिया जाता है।

इस प्रकार ऐसी प्रस्तर कलाकृतियों का रासायनिक उपनार स्वयमेव एक शिल्प है। दीर्घ काल तक जलीय निमज्जन अथवा अत्यधिक जल अवशोषक

के फलस्वरूप ये पत्थर टुकड़े- टकड़े हो सकते हैं अतः ऐसे पत्थर भी वस्तुओं को 30 घंटे से अधिक समय नहीं रखना चाहिए। चूंकि यह प्रस्तर अत्यन्त मृदु होते हैं अतः अच्छे बरुश द्वारा सावधानीपूर्वक रगड़ना चाहिए ताकि उनपर खरोच न पड़े। ऐसे पत्थरों की कलाकृतियां के उपचारार्थ पर्याप्त अनुभव एवं उच्च व्यावहारिक कुशलता की आवश्यकता होती है।